॥ आचाराङ्गसूत्रके २, ३, ४ अध्ययनों की विषयानुक्रमणिका ॥

(द्वितीय अध्ययन–प्रथम उद्देश)

विषय	पृष्ठाङ्क
१ प्रथमाध्ययन के साथ द्वितीय अध्ययनका सम्बन्धकथन, द्वितीय अध्ययन के छहों उद्देशों के विषयों का संक्षिप्त वर्णन।	१–३
२ द्वितीय अध्ययन के प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र।	४–५
३ शब्दादि कामगुण ही मूलस्थान अर्थात् मोहनीयादि के आश्रय हैं, उन शब्दादि–कामगुणों से युक्त प्राणी परितापयुक्त बना रहता है, और उसकी उस परिस्थितिमें जो भावना रहती है उसका वर्णन।	६–२८
४ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र।	२९
५ शब्दादिकामगुणमोहित प्राणी वृद्धावस्थामें मूढताको प्राप्त करता है – इसका वर्णन।	३०–५६
६ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र।	५७
७ वृद्धावस्था में उस मनुष्य की जो दशा होती है–उसका वर्णन।	५८–७२
८ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र।	७२–७३
९ मनुष्य की वृद्धावस्थामें जो दुर्दशा होती है उसे विचार कर संयम–पालन में मुहूर्तमात्र भी प्रमाद न करे।	७४–८६
१० पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र।	८७
११ प्रमादी पुरुषों के कार्य का वर्णन।	८८–९५
१२ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र।	९६
१३ माता पिता या पुत्र कोई भी इहलोक–सम्बन्धी और परलोक–सम्बन्धी दुःखों से बचाने में समर्थ नहीं हैं।	९६–९७
१४ सप्तम सूत्रका अवतरण और सप्तम सूत्र।	९८
१५ असंयत पुरुष उपभोगके लिये धनसंग्रह करता है और उपभोग के समय उसे कासश्वासादि रोग हो जाते हैं, उस समय उसके माता पिता और पुत्र कोई भी रक्षक नहीं होते हैं।	९९–१००

विषय	पृष्ठाङ्क
१६ आठवें सूत्रका अवतरण और आठवां सूत्र।	१००
१७ वृद्धावस्थामें कोई रक्षक नहीं होता और बाल्यावस्था भी पराधीन होने के कारण दुःखमय ही है–ऐसा विचार कर युवावस्था को ही संयमपालन का योग्य अवसर समझना चाहिये।	१०१–१२२
१८ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र।	१२२
१९ वार्द्धक्य और रोगों से जब तक श्रोत्रादि इन्द्रियों के परिज्ञान नष्ट नहीं हुए हैं, तभी तक चारित्रानुष्ठानमें प्रवृत्त हो जाना चाहिये।	१२३–१२७

॥ इति प्रथमोद्देशः ॥

*

॥ अथ द्वितीयोद्देशः ॥

१ प्रथम उद्देश के साथ द्वितीय उद्देश का सम्बन्धप्रतिपादन।	१२८
२ प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र।	१२९–१३०
३ संसारकी असारता को जाननेवाला मुनि संयमविषयक अरतिको दूर कर क्षणमात्रमें मुक्त हो जाता है।	१३१–१३७
४ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र।	१३८
५ जिनाज्ञा से बहिर्भूत साधु मुक्तिभागी नहीं होता।	१३९–१४४
६ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र।	१५५
७ 'अनगार' कौन कहलाते हैं।	१४६–१५४
८ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र।	१५४
९ विषयासक्तिवश परितप्त होकर धन की स्पृहासे दण्डसमारम्भ करनेवाला मनुष्य का वर्णन।	१५५–१५९
१० पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र।	१५९
११ संयमी को दण्ड समारम्भ नहीं करना चाहिये। उद्देश समाप्ति।	१६०–१६२

॥ इति द्वितीयोद्देशः ॥

॥ अथ तृतीयोद्देशः ॥

विषय	पृष्ठाङ्क
१ द्वितीय उद्देश के साथ तृतीय उद्देश का सम्बन्धप्रतिपादन।	१६३
२ प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र।	१६४
३ पण्डित को उच्च कुलकी प्राप्ति से हर्ष नहीं करना चाहिये; और न नीच कुलकी प्राप्तिसे क्रोध ही करना चाहिये।	१६५–१७०
४ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र।	१७१
५ किसी भी प्राणीका अहित नहीं करना चाहिये। प्राणियों के अहित करनेवालों की दुरवस्था का वर्णन।	१७२–१८६
६ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र।	१८६
७ उच्चकुलाभिमानी मनुष्य प्राणियों का अहित करके जन्मान्तर में कोई अन्धता आदि फल पाकर सकलजननिन्दित होता हुआ, और कोई खेत–घर–धनधान्य–स्त्री आदि परिग्रहमें आसक्त हो तप आदिकी निन्दा करता हुआ विपरीत बुद्धिवाला हो जाता है।	१८७–१९४
८ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र।	१९४
९ संयमियों के कर्त्तव्य का निरूपण।	१९५–२०६
१० पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र।	२०७
११ असंयमियों के जीवन स्वरूपका वर्णन।	२०७–२१४
१२ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र।	२१४–२१५
१३ असंयमीका अन्यायोपार्जित धन नष्ट हो जाता है, और कुटुम्ब की चिन्ता से व्याकुल वह असंयमी कार्याकार्य को नहीं जानता हुआ विपरीतबुद्धियुक्त हो जाता है।	२१५–२२१
१४ सातवें सूत्रका अवतरण और सातवाँ सूत्र।	२२१
१५ 'सुखको चाहनेवाला मूढमति असंयमी मनुष्य दुःखही भोगता है' इस बातको भगवान महावीर स्वामीने स्वयं प्ररूपित किया है–इस प्रकार सुधर्मा स्वामी का कथन।	२२२–२२६
१६ आठवें सूत्रका अवतरण और आठवाँ सूत्र।	२२७

विषय पृष्ठाङ्क

१७ पश्यक–तीर्थंकर गणधर आदि नरकादि गतिके भागी नहीं होते हैं, बाल–अज्ञानी जीव तो नरक आदि गति के भागी ही निरन्तर होते रहते हैं—इसका प्रतिपादन और उद्देश–समाप्ति। २२७–२३५

॥ इति तृतीयोद्देशः ॥

*

॥ अथ चतुर्थोद्देशः ॥

१ तृतीय उद्देश के साथ चतुर्थ उद्देशका सम्बन्धप्रतिपादन। २३६

२ प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र। २३७–२३८

३ वृद्धावस्था में ही श्वासकासादि रोग होते हों, ऐसी बात नहीं! ये तो युवावस्था में भी होते हैं। उस रोगावस्था में उस प्राणी का रक्षक कोई सगा–सम्बन्धी नहीं होता है, और न वही प्राणी उस रोगावस्था से आक्रान्त अपने सगे–सम्बन्धीका रक्षक हो सकता है। २३८–२४०

४ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र। २४१

५ भोगसाधन धनकी विनाशशीलताका वर्णन। २४१–२४२

६ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र। २४२–२४३

७ भोगसाधन धन विनश्वर है; अतः भोगकी स्पृहा और भोगके विचार का भी परित्याग कर देना चाहिये। २४३–२५५

८ चौथे सूत्रका अवतरण और चौथा सूत्र। २५६

९ 'कामभोग का आसेवन महा भयस्थान है' ऐसा जानकर अनगार क्या करे? इसका उपदेश तथा उद्देश–समाप्ति। २५६–२६१

॥ इति चतुर्थोद्देशः ॥

*

॥ अथ पञ्चमोद्देशः ॥

विषय	पृष्ठाङ्क
१ चतुर्थ उद्देशके साथ पञ्चम उद्देशका सम्बन्धप्रतिपादन।	२६२–२६४
२ प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र।	२६४
३ गृहस्थ कर्मसमारम्भ जिन हेतुओं से करते हैं, उन हेतुओं का प्रतिपादन।	२६५–२६८
४ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र।	२६९
५ भविष्य में उपभोग के लिये पदार्थों के संग्रहमें प्रवृत्त गृहस्थों के बीच संयमाराधनमें तत्पर अनगार को किस प्रकार रहना चाहिये।	२६९–२७२
६ तृतीय सूत्र का अवतरण और तृतीय सूत्र।	२७३
७ साधुको क्रयण, क्रापण और उसके अनुमोदन से रहित होना चाहिये।	२७३–२७५
८ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र।	२७६
९ हननकोटित्रिक और क्रयणकोटित्रिकसे रहित साधुका वर्णन।	२७६–२८३
१० पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र।	२८३
११ साधुको एषणीय आहारके सदृश एषणीय वस्त्रपात्रादि भी गृहस्थसे ही याचना चाहिये।	२८४
१२ षष्ठ सूत्रका अवतरण और षष्ठ सूत्र।	२८५
१३ 'मुनिको मात्राज्ञ होना चाहिये' इसका वर्णन।	२८५–२९१
१४ सप्तम सूत्रका अवतरण और सप्तम सूत्र।	२९१
१५ श्रुतचारित्र रूप इस मार्गको आर्योंने प्रवेदित किया है। इस मार्ग पर स्थित हो कर जिस प्रकार कर्म से उपलिप्त न हो वैसा करना चाहिये।	२९१–२९२
१६ अष्टम सूत्रका अवतरण और अष्टम सूत्र।	२९२
१७ हिरण्य–सुवर्णादि तथा शब्दादि काम दुरुल्लङ्घ्य हैं। इन कामों को चाहनेवाले पुरुषकी जो दशा होती है उसका वर्णन।	२९३–२९९
१८ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र।	२९९

विषय	पृष्ठाङ्क
१९ ज्ञाननेत्रयुक्त मुनिका वर्णन।	२९९–३०७
२० दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र।	३०७
२१ साधुको कामभोगाशासे युक्त नहीं होना चाहिये; क्यों कि कामभोगाशासे युक्त साधु बहुमायी हो कर लोभ और वैर बढानेवाला होता है। वह अपनेको अमर समझता है, इष्ट–विनाश–आदि कारण से वह उच्च स्वर से रुदन करता है।	३०८–३१३
२२ ग्यारहवां सूत्रका अवतरण और ग्यारहवां सूत्र।	३१३
२३ बाल–अज्ञानी परतैर्थिक कामभोगस्पृहाकी चिकित्सा कामभोगसेवनही कहते हैं; इसलिये वे हननादिक क्रियासे युक्त होते हैं। परन्तु अनगार ऐसे नहीं होते हैं। उद्देश–समाप्ति।	३१४–३१८

॥ इति पञ्चमोद्देशः ॥

*

॥ अथ षष्ठोद्देशः ॥

१ पञ्चम उद्देशके साथ षष्ठ उद्देशका सम्बन्धप्रतिपादन।	३१९
२ प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र।	३१९
३ षड्जीवनिकाय के उपघातका उपदेश नहीं देनेवाले अनगार कभी भी पापाचरण नहीं करते।	३२०–३२१
४ द्वितीय सूत्र का अवतरण और द्वितीय सूत्र।	३२१
५ जो छ जीवनिकायों या छ व्रतों में से किसी एक की विराधना करता है वह छहों की विराधना करता है। सुखार्थी वह वाचाल होता है, और अपने दुःखसे मूढ हो वह सुख के बदले दुःख ही पाता है। वह अपने विप्रमादसे अपने व्रतों को विपरीत प्रकार से करता है, अथवा वह अपने संसार को बढाता है, या एकेन्द्रियादिरूप अवस्था को प्राप्त करता है। इसलिये चाहिये कि प्राणियों को जिनसे दुःख हो ऐसे दुःखजनक कर्मों का आचरण नहीं करे। इस प्रकार के कर्मों के अनाचरण से कर्मोपशान्ति होती है।	३२२–३३१

विषय	पृष्ठाङ्क
६ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र।	३३२
७ ममत्वबुद्धि से रहित हो मनुष्य रत्नत्रययुक्त अनगार होता है।	३३२–३३४
८ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र।	३३४
९ मेधावी मुनि ममत्वबुद्धिको छोड़कर, लोकस्वरूप को जानकर आहारादिमूर्च्छारूप संज्ञा से रहित हो संयमानुष्ठान में पराक्रम करे।	३३४–३३६
१० पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र।	३३६
११ कर्मविदारण करनेमें समर्थ, पुत्रकलत्रादिको त्यागनेवाले वीर चारित्रविषयक अरति और शब्दादिविषयक रतिको दूर कर देते हैं; क्यों कि वे अनासक्त होते हैं; अत एव वे शब्दादिविषयों में रागयुक्त नहीं होते।	३३७
१२ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र।	३३८
१३ मुनि इष्टानिष्ट शब्दादि विषयों में रागद्वेष न करता हुआ असंयमजीवन सम्बन्धी प्रमोदको दूर करे, मौन ग्रहणकर कर्मक्षपण करे। सम्यक्त्वदर्शी वीर मुनि प्रान्त और रूक्ष अन्न सेवन करते हैं। प्रान्त–रूक्ष अन्न सेवन करनेवाले मुनि कर्मका विनाश कर ओघन्तर, तीर्ण और मुक्त होते हैं। ऐसे ही मुनि विरत कहलाते हैं।	३३८–३४३
१४ सातवें सूत्रका अवतरण और सातवां सूत्र।	३४३
१५ दुर्वसु मुनि भगवान्की आज्ञाका विराधक हो कर तुच्छता एवं ग्लानिको प्राप्त करता है, और भगवान्की आज्ञाका आराधक सुवसु मुनि तुच्छता एवं ग्लानि को नहीं पाते हैं और तीर्थङ्कर गणधर आदि से प्रशंसित होते हैं। यह सुवसु मुनि लोकसंयोग से रहित हो मुक्तिगामी होते हैं।	३४३–३४७
१६ आठवें सूत्रका अवतरण और आठवाँ सूत्र।	३४७
१७ शारीरिक–मानसिक दुःखजनक कर्मों का जहां जिस प्रकार से बन्ध होता है, मोक्ष होता है, और विपाक होता है। उन सबों	

विषय	पृष्ठाङ्क
का तीर्थङ्कर गणधर आदिने प्ररूपण किया है। कुशल मुनि बन्ध और मोक्षके उपायों को सर्वदा समझाते हैं। उन बन्ध और मोक्षके उपायों को जान कर भव्य आस्रवद्वारों से दूर रहे। जो मुनि अन्य दर्शनों में श्रद्धान नहीं रखते हैं–जो मुनि अनन्यदर्शी होते है–वे अनन्याराम होते हैं और जो अनन्याराम होते हैं वे अनन्यदर्शी होते हैं। कुशल मुनिका उपदेश पुण्यात्मा और तुच्छात्मा दोनों के लिये बराबर होता है। एसे मुनिका उपदेश द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावके अनुसार ही होता है।	३४८–३५४
१८ नवम सूत्र का अवतरण और नवम सूत्र।	३५५
१९ धर्मोपदेशक श्रोताकी परीक्षा करके धर्मोपदेश करे। ऐसा धर्मोपदेशक ही प्रशंसित होता है। यह मुनि अष्टविधकर्मपाशसे बद्ध जीवों को छुडाता है, सभी दिशाओं में सर्वपरिज्ञाचारी होता है और हिंसादि स्थानों से लिप्त नहीं होता है। कर्मों के नाश करने में कुशल, बन्धप्रमोक्षान्वेषी–रत्नत्रय का अन्वेषणशील– वह मुनि न बद्ध है न मुक्त है।	३५६–३६३
२० दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र।	३६४
२१ तीर्थङ्कर, सामान्य केवली और रत्नत्रययुक्त साधुओं ने जैसा आचरण किया है वैसा ही आचरण दूसरे साधु करें, तीर्थङ्करादिकोंने जिस आचरणको प्रतिषिद्ध माना है उस आचरण से दूर रहें।	३६४–३६६
२२ ग्यारहवें सूत्र का अवतरण और ग्यारहवां सूत्र।	३६७
२३ पश्यक–तीर्थङ्कर गणधरादिक नरकादिगतिके भागी नहीं होते, बाल–अज्ञानी तो निरन्तर होते रहते हैं। उद्देशसमाप्ति। द्वितीयाध्ययनसमाप्ति।	३६७
२४ द्वितीय अध्ययन की टीकाका उपसंहार।	३६८

॥ इति द्वितीयाध्ययनम् ॥

*

॥ अथ तृतीयाध्ययनम् ॥

॥ अथ प्रथमोद्देशः ॥

विषय	पृष्ठाङ्क
१ द्वितीयाध्ययन के साथ तृतीय अध्ययनका सम्बन्धप्रतिपादन, चारों उद्देशों के विषयों का संक्षिप्त वर्णन।	३६९–३७०
२ प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र।	३७१
३ अमुनि सर्वदा सोते रहते हैं, और मुनि सर्वदा जागते रहते हैं।	३७१–३८०
४ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र।	३८०
५ दुःखजनक प्राणातिपातादि कर्म अहितके लिये होते हैं; इसलिये प्राणातिपातादि कर्मों से विरत रहना चाहिये।	३८०–३८४
६ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र।	३८४
७ जो शब्दादि विषयों में रागद्वेषरहित है–ऐसा ही प्राणी आत्मवान्, ज्ञानवान्, व्रतवान्, धर्मवान् और ब्रह्मवान् होता है। ऐसा ही प्राणी षड्जीवनिकायस्वरूप लोकके परिज्ञानसे युक्त होता है। वही मुनि कहलाता है। वही धर्मवित् और ऋजु है, एवं वही आवर्त्त और स्रोतके संबन्धको जानता है।	३८५–३८८
८ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र।	३८९
९ आवर्त्त और स्रोतके सम्बन्धके जाननेवाला मुनि बाह्य और आभ्यन्तर ग्रन्थिसे रहित, अनुकूल और प्रतिकूल परीषहों को सहन करनेवाले, संयम विषयक अरति और शब्दादि विषयक रति की उपेक्षा करनेवाले होते हैं, और वे परिषहों की परुषता को पीडाकारक नहीं समझते हैं। वे सर्वदा श्रुतचारित्ररूप धर्म में जागरूक रहते हैं, दूसरों का अपकार नहीं करना चाहते हैं। वे वीर अर्थात् कर्मविदारण करने में समर्थ होते हैं। इस प्रकारके मुनि दुःख के कारणभूत कर्मोंसे मुक्त हो जाते हैं।	३८९–३९१
१० पाँचवें सूत्रका अवतरण और पाँचवाँ सूत्र।	३९२
११ जरा और मृत्युके वशमें पडा हुआ मनुष्य सर्वदा मूढ बना रहता है, इसलिये वह श्रुतचारित्र धर्म को नहीं जानता है।	३९२

विषय	पृष्ठाङ्क
१२ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र।	३९२
१३ आत्मकल्याणार्थी मनुष्य आतुर प्राणियों को देखकर, अप्रमत्त हो, संयमाराधनमें तत्पर रहे—इस प्रकार संयमाराधनमें तत्पर रहनेके लिये शिष्यको आज्ञा देना।	३९३
१४ सप्तम सूत्र।	३९४
१५ 'यह संसारपरिभ्रमणरूप दुःख सावद्यक्रियाके अनुष्ठानसे होता है, ऐसा जानकर आत्मकल्याणके लिये अभ्युद्यत रहो' इस प्रकार शिष्यके प्रति कथन। मायी और प्रमादी वारंवार नरकादियातना को प्राप्त करता है। जो पुरुष शब्दादि-विषयों में रागद्वेषरहित होता है, माया एवं प्रमाद से दूर रहता है, वारंवार मरणजनित दुःखके आने की आशंकासे भयभीत रहता है; वह श्रुतचारित्र धर्ममें जागरूक हो मरणसे छूट जाता है।	३९४–३९५
१६ अष्टम सूत्र।	३९५
१७ संसारी जीवोंके दुःखों के जाननेवाले, कामभोगजनित प्रमादोंसे रहित, पाप कर्मों से निवृत्त वीर पुरुष आत्माके उद्धार करनेमें समर्थ होते हैं।	३९६
१८ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र।	३९६
१९ जो शब्दादि विषयों में होनेवाला सावद्य कर्म के ज्ञाता हैं वे निरवद्य क्रियारूप संयम में होनेवाले दुःखों के सहन की उपयोगिता को भी जाननेवाले हैं, और जो निरवद्यक्रियारूप संयममें दुःखों के सहन की उपयोगिता को जाननेवाले हैं वे शब्दादिविषयोंमें होनेवाले सावद्य कर्म के भी ज्ञाता हैं।	३९७–३९९
२० दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र।	३९९
२१ कर्मरहित मुनिको नारकादि व्यवहार नहीं होता है; क्यों कि उपाधिका जनक कर्म है।	३९९–४०१
२२ ग्यारहवें सूत्रका अवतरण और ग्यारहवां सूत्र।	४०२
२३ कर्मको संसारका कारण जानकर कर्मके कारण प्राणातिपातादि का त्याग करे।	४०२–४०३

विषय	पृष्ठाङ्क
२४ बारहवाँ सूत्र ।	४०३
२५ मुनि कर्मस्वरूपका पर्यालोचन कर सर्वज्ञ–जिन सम्बन्धी उपदेश, या संयमको स्वीकार कर रागद्वेषसे रहित हो वीतराग हो जाते हैं ।	४०३
२६ तेरहवां सूत्र ।	४०४
२७ कर्मके कारण रागद्वेषका ज्ञानपूर्वक परित्याग कर, संसारी लोगों को विषयकषायों से व्यामोहित जान कर, तथा विषयाभिलाष-रूप लोकसंज्ञाका वमन कर मतिमान् मुनि संयमाराधनमें तत्पर रहे, संयम ग्रहण कर पश्चात्ताप न करे । उद्देशसमाप्ति ।	४०४–४०५

॥ इति प्रथमोद्देशः ॥

*

॥ अथ द्वितीयोद्देशः ॥

१ प्रथम उद्देश के साथ द्वितीय उद्देश का सम्बन्धप्रतिपादन, और द्वितीय उद्देशका प्रथम सूत्र ।	४०६
२ प्राणियों के जन्मवृद्धिका विचार करो; सभी प्राणियों को सुखप्रिय होता है और दुःख अप्रिय होता है – इस वस्तु को समझो । इस प्रकार विचार करनेवाला प्राणी अतिविद्य हो कर –'निर्वाणपद या वहां तक पहुंचानेवाले सम्यग्दर्शन आदि परम हैं' ऐसा जान कर परमार्थदर्शी बनकर सावद्य कर्म नहीं करता ।	४०६–४०९
३ द्वितीय सूत्र ।	४१०
४ इस मनुष्यलोकमें बन्धन के कारणभूत मनुष्यों के साथ के सम्बन्धों को छोड़ो । आरम्भजीवी मनुष्य ऐहिक–पारलौकिक दुःखोंको भोगनेवाले होते हैं । कामभोगों में अभिलाषा रखने-वाले जीव अष्टविध कर्मों का संचय करते रहते हैं और काम-भोगादिजन्य कर्मरजसे संश्लिष्ट हो वारंवार गर्भगामी होते हैं ।	४१०–४११
५ तृतीय सूत्र ।	४११

विषय	पृष्ठाङ्क
६ अज्ञ मनुष्य मनोविनोद के निमित्त प्राणियोंका संहार कर आनंद मानता है। बालों–अज्ञों का संग व्यर्थ है। उनके संग से तो द्वेषकी ही वृद्धि होती है।	४११–४१२
७ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र।	४१३
८ बालों के संगसे द्वेष ही बढता हैं; इस हेतु अतिविद्य – सम्यग्ज्ञानवान् प्राणी परम की, अर्थात्–सिद्धिगति नामक स्थान की अथवा सर्वविरतिरूप चारित्र की सत्ता को जान कर, नरक-निगोदादिके विविध दुःखोंके ज्ञानसे युक्त हो, पापानुबन्धी कर्म नहीं करता है, न दूसरों से कराता है, न करनेवाले का अनुमोदन ही करता है। वह धीर मुनि, अग्र और मूल का विवेक कर के, कर्मों का छेदन कर निष्कर्मदर्शी हो जाता है।	४१३–४१५
९ पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र।	४१६
१० यह निष्कर्मदर्शी मरणसे मुक्त हो जाता है, केवली होकर दूसरों को भी मुक्त करता है। इहलोकादि भय को देखनेवाला यही मुनि कहलाता है। मुनि परमदर्शी, विविक्तजीवी और उपशान्त आदि हो कर, पण्डितमरणकी आकाङ्क्षा करता हुआ संयमाराधनमें तत्पर रहे।	४१६–४१८
११ छठा सूत्र।	४१८
१२ पापकर्म बहुत प्रकारके कहे गये हैं, उनको दूर करनेके लिये संयम में धृति धरो। संयमपरायण मेधावी मुनि समस्त पाप कर्मोंका क्षपण करता है।	४१८–४१९
१३ सातवाँ सूत्रका अवतरण और सातवाँ सूत्र।	४१९–४२०
१४ अनेक विषयों में आसक्तचित्त संसारी पुरुषों की इच्छाकी पूर्त्ति नहीं होती। ऐसे पुरुष अन्यवधादिरूप पापकर्मों में ही निरत रहते हैं।	४२०–४२४

विषय	पृष्ठाङ्क
१५ आठवाँ सूत्र ।	४२४
१६ इन अन्यवधादिकों का सेवन करके भरतादि-जैसे कोई २ इन्हें निस्सार समझ कर संयमाराधन में तत्पर हुए हैं । इसलिये इनको निस्सार समझ कर ज्ञानी इनका सेवन नहीं करे ।	४२४-४२५
१७ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र ।	४२५
१८ देव भी जन्ममरणशील होते हैं; इसलिये उनके सुख को भी नश्वर समझ कर श्रुतचारित्रधर्मका सेवन करो ।	४२६
१९ दशम सूत्र ।	४२७
२० श्रुतचारित्र धर्म के आराधनमें तत्पर मुनि किसी की हिंसा न करे, न दूसरों से हिंसा करावे और न हिंसा करनेवाले की अनुमोदना ही करे ।	४२७
२१ ग्यारहवाँ सूत्र का अवतरण और ग्यारहवाँ सूत्र ।	४२७
२२ स्त्रियों में अनासक्त, सम्यग्ज्ञानदर्शन चारित्रके आराधन में तत्पर तथा पाप के कारणभूत कर्मों से निवृत्त मुनि वैषयिक सुख की जुगुप्सा करे ।	४२७-४२८
२३ बारहवाँ सूत्र ।	४२९
२४ क्रोधादि का नाश करे, लोभ का फल नरक समझे, प्राणियों की हिंसा से निवृत्त रहे, मोक्ष की अभिलाषा से कर्मों के कारणों को दूर करे ।	४२९-४३०
२५ तेरहवाँ सूत्र ।	४३१
२६ इस संसारमें समय की प्रतीक्षा न करते हुए तत्काल ही बाह्याभ्यन्तर ग्रन्थिको जान कर परित्याग करे; स्रोत को जान कर संयमाचरण करे, इस दुर्लभ नरदेहको पाकर किसी की भी हिंसा न करे। उद्देशसमाप्ति ।	४३१-४३३

॥ इति द्वितीयोद्देशः ॥

*

॥ अथ तृतीयोद्देशः ॥

विषय	पृष्ठाङ्क
१ द्वितीयोद्देशके साथ तृतीयोद्देशका सम्बन्धप्रतिपादन, और प्रथम सूत्र।	४३४
२ सन्धिको जान कर लोकके क्षायोपशमिक भावलोक के विषयमें प्रमाद करना उचित नहीं है। अथवा–सन्धि को जान कर लोक को–षड्जीवनिकायरूप लोक को–दुःख देना ठीक नहीं है।	४३५
३ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र।	४३५
४ अपने को जैसे सुख प्रिय है और दुःख अप्रिय, उसी प्रकार सभी प्राणियों को है। इसलिये किसी भी प्राणी की न स्वयं घात करे, न दूसरों से घात करावे, न घात करनेवाले की अनुमोदना ही करे।	४३५–४३६
५ तृतीय सूत्र का अवतरण और तृतीय सूत्र।	४३७
६ मुनित्व किसे प्राप्त होता है।	४३७–४४०
७ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र।	४४०–४४१
८ ज्ञानी पुरुष चारित्र में कभी भी प्रमाद न करे, जिनप्रवचनोक्त आहारमात्रा से शरीर–यापन करे।	४४१–४४२
९ पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र।	४४३
१० मुनि उत्तम, मध्यम एवं अधम इन सभी रूपों में वैराग्ययुक्त होवे।	४४४
११ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र।	४४५
१२ जो मुनि जीवों की गति और आगति को जान कर रागद्वेषसे रहित हो जाता है, वह समस्त जीवलोकमें छेदन, भेदन, दहन और हनन–जन्य दुःखों से रहित हो जाता है।	४४५–४४७
१३ सातवें सूत्रका अवतरण और सातवां सूत्र	४४८
१४ मिथ्यादृष्टि जीव भूतकाल और भविष्यत्काल सम्बन्धी अवस्थाओं को नहीं जानते हैं। उन्हें यह नहीं ज्ञात होता कि इसका भूत-काल कैसा था और भविष्यत्काल कैसा होगा?, कोई २ मिथ्यादृष्टि तो ऐसा कहते हैं कि जैसा इस जीव का अतीतकाल था वैसा ही भविष्यकाल होगा।	४४८

विषय	पृष्ठाङ्क
१५ आठवें सूत्रका अवतरण और आठवां सूत्र।	४४९
१६ तत्त्वज्ञानी जीव अतीतकालिक और भविष्यत्कालिक पदार्थों का चिन्तन नहीं करते, वे तो वर्त्तमानकाल के ऊपर ही सावधानता से दृष्टि रखते हैं। इसलिये मुनि विशुद्धाचारी या अतीतानागत कालके संकल्प से रहित हो कर, निरतिचार संयमकी आराधना कर पूर्वोपार्जित सकल कर्मोंका क्षपण करे।	४५०–४५१
१७ नवम सूत्र का अवतरण और नवम सूत्र।	४५१–४५२
१८ अरति और आनन्दकी असारता का विचार कर, उनके विषय में विचलित न होता हुआ ध्यान मार्ग में विचरण करे, तथा सभी प्रकार के हास्योंका परित्याग कर आलीनगुप्त होते हुए संयमानुष्ठान में तत्पर रहे।	४५२–४५५
१९ दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र।	४५५
२० पुरुष अपना मित्र अपने ही है। बाहरमें मित्र खोजना व्यर्थ है।	४५५–४५७
२१ ग्यारहवें सूत्रका अवतरण और ग्यारहवां सूत्र।	४५७–४५८
२२ जो पुरुष कर्मों के दूर करनेकी इच्छावाला है वह कर्मों को दूर करनेवाला है और जो कर्मों को दूर करनेवाला है वह कर्मों के दूर करने की इच्छावाला है।	४५८–४५९
२३ बारहवें सूत्रका अवतरण और बारहवां सूत्र।	४५९–४६०
२४ अपनी आत्माको बाह्य पदार्थों से निवृत्त कर, उसे ज्ञानदर्शन-चारित्र से युक्त कर पुरुष दुःखसे मुक्त हो जाता है।	४६०–४६१
२५ तेरहवां सूत्र।	४६१
२६ सत्यको–अर्थात्–गुरु की साक्षिता से गृहीत श्रुतचारित्र धर्म सम्बन्धी ग्रहणी और आसेवनी शिक्षा को, अथवा आगमको विस्मृत न करते हुए तदनुसार आचरण करो। सत्यका अनुसरण करनेवाला मेधावी संसार समुद्रका पारगामी होता है और ज्ञानादियुक्त होने से श्रुतचारित्र धर्मको ग्रहण कर वह मुनि मोक्षपददर्शी होता है।	४६२

विषय	पृष्ठाङ्क
२७ चौदहवें सूत्रका अवतरण और चौदहवां सूत्र।	४६३
२८ रागद्वेष का वशवर्त्ती जीव क्षणभङ्गुर जीवनके परिवन्दन, मानन और पूजनके लिये प्राणातिपात आदि असत्कर्मों में प्रवृत्ति करते हैं। इस प्रकार वे परिवन्दन, मानन और पूजनके विषय में प्रमादशील हो जाते हैं, प्रमादी हो जन्म जरा मरणरूप दुःखार्णव में अपने को डुबो देते हैं, अथवा—इस प्रकार वे उन परिवन्दनादिकों में आनन्द मानते हैं; परंतु वे परिवन्दनादिक उनके हितके लिये नहीं होते।	४६३–४६४
२९ पन्द्रहवें सूत्रका अवतरण और पन्द्रहवां सूत्र।	४६४–४६५
३० ज्ञानचारित्रयुक्त मुनि दुःखमात्रासे स्पृष्ट होकर भी व्याकुल नहीं होता। हे शिष्य! तुम पूर्वोक्त अर्थ अथवा वक्ष्यमाण अर्थ को अच्छी तरह समझो। रागद्वेषरहित मुनि लोकालोक प्रपञ्च से मुक्त हो जाता है। उद्देशसमाप्ति।	४६५–४६६

॥ इति तृतीयोद्देशः ॥

*

॥ अथ चतुर्थोद्देशः ॥

१ तृतीय उद्देश के साथ चतुर्थ उद्देशका सम्बन्ध प्रतिपादन और प्रथम सूत्र।	४६७–४३८
२ शुभाध्यवसायपूर्वक संयमके आराधनमें तत्पर मुनि क्रोध, मान माया और लोभको दूर करनेवाला होता है; यह बात तीर्थङ्करोंने कही है। तीर्थङ्करों के उपदेशका अनुसरण करनेवाला साधु आदान का—अष्टादश पापस्थानों का, अथवा कषायों का – वमन करनेवाला और स्वकृत कर्मों का नाश करनेवाला होता है।	४६८–४७२
३ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र।	४७२–४७३
४ जो एक को जानता है वह सबको जानता है, जो सबको जानता है वह एकको जानता है।	४७४–४७५
५ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र।	४७५

विषय	पृष्ठाङ्क
६ प्रमादीको सबसे भय रहता है और अप्रमादीको किसीसे भी नहीं !	४७५–४७७
७ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र।	४७७–४७८
८ जो एकका उपशम करता है वह बहुतका उपशम करता है; जो बहुतका उपशम करता है वह एकका उपशम करता है।	४७८–४७९
९ पांचवें सूत्रका अवतरण और पांचवां सूत्र।	४७९
१० धीर मुनि–षड्जीवनिकायलोकके दुःखकारण कर्मोंको जानकर, पुत्रकलत्रादि तथा हिरण्यसुवर्णादिकी ममता छोड़कर चारित्रको ग्रहण करते हैं और परसे पर जाते हैं, ऐसे मुनि अपने जीवन की अभिलाषा नहीं रखते हैं।	४८०–४८५
११ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र।	४८५
१२ एकका विवेचन करते हुए दूसरोंका भी विवेचन करता है, दूसरोंका विवेचन करते हुए एकका भी विवेचन करता है।	४८६–४८७
१३ सातवें सूत्रका अवतरण और सातवां सूत्र।	४८७
१४ मोक्षाभिलाषरूप श्रद्धावाला, जैनागमके अनुसार आचरण करता हुआ, मेधावी अप्रमत्त संयमी क्षपकश्रेणीको प्राप्त करता है।	४८७–४८८
१५ आठवें सूत्रका अवतरण और आठवां सूत्र।	४८८
१६ षड्जीवनिकायके स्वरूपको जिनोक्त प्रकारसे जानकर, जिससे षड्जीवनिकाय लोकको किसी प्रकारका भय न हो उस प्रकारसे संयमाराधन करे।	४८८–४८९
१७ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र।	४८९
१८ शस्त्र परसे पर है और अशस्त्र परसे पर नहीं है।	४८९–४९१
१९ दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र।	४९१
२० भावशस्त्र परसे पर होता है, अर्थात्–जो क्रोधदर्शी होता है वह क्रमशः तिर्यग्दर्शी=निगोदभवसम्बन्धी दुःखोंको देखनेवाला होता है।	४९२–४९४
२१ ग्यारहवें सूत्रका अवतरण और ग्यारहवां सूत्र।	४९४

विषय	पृष्ठाङ्क
२२ पूर्वोक्त मेधावी मुनिको चाहिये कि क्रोधसे लेकर मोह तकके भावशस्त्रों का परित्याग कर क्रोधादिकके फलभूत गर्भदुःखादिसे लेकर निगोददुःखपर्यन्त सभी दुःखोंको दूर करे—यह बात भगवान् तीर्थङ्करने कही है।	४९४–४९५
२३ बारहवें सूत्रका अवतरण और बारहवां सूत्र।	४९५
२४ क्रोधादिको दूर करनेवाला अपने पूर्वोपार्जित कर्मोंका क्षपण करनेवाला होता है।	४९६
२५ तेरहवें सूत्रका अवतरण और तेरहवां सूत्र।	४९६
२६ पश्यकको, अर्थात्—केवलीको उपाधि, अर्थात्—द्रव्योपाधि भावोपाधि, अथवा—कर्मजनित नरकादिभव होता है क्या?; पश्यकको उपाधि नहीं है। उद्देशसमाप्ति।	४९६–४९९

॥ इति तृतीयाध्ययनम् ॥

*

॥ अथ चतुर्थाध्ययनम् ॥

॥ अथ प्रथमोद्देशः ॥

१ तृतीय अध्ययनके साथ चतुर्थ अध्ययनका सम्बन्धप्रतिपादन।	५००
२ प्रसङ्गतः सम्यक्त्वका निरूपण।	५००
३ सम्यक्त्व शब्दकी सिद्धि, सम्यक्त्वका लक्षण, सम्यक्त्वके लक्षणके विषयमें वादियों की विप्रतिपत्तिका निरसन।	५००–५११
४ सम्यक्त्वका द्वैविध्य और दशविधत्वका सविस्तर विवरण।	५१२–५२८
५ सम्यक्त्वकी स्थिति।	५२९
६ सम्यक्त्वके प्रादुर्भावकी व्यवस्था।	५२९–५३०
७ सम्यक्त्वका अन्तरकाल।	५३०
८ सम्यक्त्वका फल।	५३१–५५९
९ सम्यक्त्वप्राप्तिका क्रम।	५५९–५७२

विषय	पृष्ठाङ्क
१० सम्यक्त्वमोहनीयका स्वरूप ।	५७३–५७५
११ मिश्रमोहनीय ।	५७६
१२ मिथ्यात्वमोहनीय ।	५७६–५८४
१३ प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र।	५८५
१४ सभी तीर्थङ्करोंद्वारा प्रतिपादित सम्यक्त्वका निरूपण ।	५८५–५८८
१५ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र ।	५८९
१६ यह सर्वप्राणातिपातविरमणादिरूप धर्म–शुद्ध, नित्य और शाश्वत है । इस धर्मको भगवान्ने षड्जीवनिकायरूप लोकको दुःख–दावानलके अन्दर जलते हुए देखकर प्ररूपित किया है। भगवान्ने इस धर्मका प्ररूपण उत्थित अनुत्थित आदि सबोंके लिये किया है।	५८९–५९३
१७ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र ।	५९३
१८ भगवान्का वचन सत्य ही है, भगवान्ने वस्तुका स्वरूप जिस प्रकार प्रतिपादन किया है वह वस्तु वैसी ही है–इस प्रकारके श्रद्धानलक्षण सम्यक्त्वका प्रतिपादन केवल आर्हतागममें ही कहा गया है; अन्यत्र नहीं !	५९३–५९४
१९ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र ।	५९५
२० उस सम्यक्त्वको प्राप्त कर, धर्मको उपदेश–आदि उपायद्वारा जान कर सम्यक्त्वको प्रशम–संवेगादिद्वारा प्रकाशित करे, सम्यक्त्वका परित्याग न करे ।	५९५–५९६
२१ पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र ।	५९७
२२ ऐहिक और पारलौकिक इष्ट–अनिष्ट शब्दादि विषयोंमें वैराग्य रखे।	५९७
२३ छठा सूत्र।	५९८
२४ लोकैषणा न करे ।	५९८–५९९
२५ सातवें सूत्रका अवतरण और सातवां सूत्र ।	५९९
२६ जिसको लोकैषणा नहीं है उसको सावद्य–व्यापारमें प्रवृत्ति कहांसे	

विषय		पृष्ठाङ्क
	हो! अथवा–जिसको यह सम्यक्त्वपरिणति नहीं है उसको सावधानुष्ठानसे रहित करनेवाली विवेकयुक्त परिणति कहांसे हो!	५९९–६००
२७	आठवें सूत्रका अवतरण और आठवां सूत्र।	६००
२८	इस सम्यक्त्वको जो मैंने कहा है उसे तीर्थङ्करोंने देखा है, गणधरोंने सुना है, लघुकर्मा भव्यजीवोंने माना है; ज्ञानावरणीय के क्षयोपशमसे भव्यजीवोंने जाना है।	६००–६०१
२९	नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र।	६०१
३०	जिनवचनमें श्रद्धारूप सम्यक्त्वके अभावसे मातापिता आदिके साथ सांसारिक संबन्ध रखता हुआ, मृत्युद्वारा उनसे वियुक्त होता हुआ, या शब्दादि विषयोंमें आसक्ति करता हुआ मनुष्य एकेन्द्रियादिक भवों में भटकता रहता है।	६०१
३१	दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र।	६०२
३२	दिन–रात मोक्षप्राप्तिके लिये उद्योगयुक्त और सर्वदा उत्तरोत्तर प्रवर्द्धमान हेयोपादेयविवेकपरिणामसे युक्त होते हुए तुम प्रमत्तों को–असंयतोंको आर्हत धर्मसे बहिर्भूत समझो; और पञ्चविध प्रमादोंसे रहित हो मोक्षप्राप्तिके लिये अविच्छिन्न प्रयत्न करो, अथवा–अष्टविध कर्मशत्रुओंको जीतनेके लिये पराक्रम करो। उद्देशसमाप्ति।	६०२–६०४

॥ इति प्रथमोद्देशः ॥

*

॥ अथ द्वितीयोद्देशः ॥

१	प्रथम उद्देशके साथ द्वितीय उद्देशका संबन्ध–प्रतिपादन; प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र।	६०५
२	जो आस्रव–कर्मबन्धके कारण हैं वे परिस्रव–कर्मनिर्जराके कारण हो जाते हैं, और जो परिस्रव–कर्मनिर्जराके कारण हैं वे आस्रव–	

विषय	पृष्ठाङ्क
कर्मबन्धके कारण हो जाते हैं। जो अनास्रव–कर्मनिर्जराकारक व्रतविशेष हैं वे अपरिस्रव–कर्मबन्धके कारण हो जाते हैं, जो अपरिस्रव–कर्मबन्धके कारण हैं वे अनास्रव–कर्मनिर्जराकारक व्रतविशेष हो जाते हैं।	६०६–६१५
३ द्वितीय सूत्र।	६१५
४ 'जो आस्रव हैं वे परिस्रव हैं जो परिस्रव हैं वे आस्रव हैं, जो अनास्रव हैं वे अपरिस्रव हैं जो अपरिस्रव हैं वे अनास्रव हैं'–इन पदोंको जानता हुआ ऐसा कौन मुनि है जो षड्जीवनिकायको बँधते हुए और मुक्त होते हुए जिनागमानुसार जान कर, तथा सभी तीर्थङ्करोंद्वारा भिन्न–भिन्नरूपसे प्रतिबोधित बन्धकारण और निर्जराकारणको जानकर धर्माचरणमें प्रवृत्त न हो!	६१५–६१६
५ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र।	६१६
६ प्रवचनज्ञानसे युक्त मुनि, हेयोपादेयको तथा यथोपदिष्ट धर्म को जाननेवाले संसारियोंके लिये उपदेश देते हैं। ज्ञानीका उपदेश सुनकर, आर्त्त अथवा प्रमत्त भी प्रबुद्ध हो जाते है। मैंने जो कुछ कहा है और मैं जो कुछ कहता हूँ वह सत्य ही हैं। मैंने यह सब भगवान्से सुनकर ही कहा है। मोक्षाभिलाषीको इसमें सम्यक्त्व–श्रद्धान रखना चाहिये।	६१६–६२०
७ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र।	६२०–६२१
८ संसारी जीव मृत्युसे नहीं बच सकते। वे धर्मसे बहिर्भूत होनेके कारण इच्छाके अधीन रहते हैं, अति–असंयमी होते हैं, काल–मृत्युसे गृहीत होते हैं, अथवा–आगामी वर्षमें या उसके बाद के वर्षोंमें धर्माचरण करनेके संकल्प करते रहते हैं, और धान्यादि संग्रह करनेमें ही लगे रहते हैं; ऐसे संसारी जीव अनन्तवार एकेन्द्रियादिक भवोंमें जन्म लेते रहते हैं।	६२१–६२४
९ पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र।	६२४
१० इस लोकमें कितनेक जीवोंको वारंवार उत्पन्न होनेके कारण	

विषय	पृष्ठाङ्क
उनसे परिचय हो जाता है, नरकादि स्थानोंमें उत्पन्न हुए वे जीव नरकादि सम्बन्धी दुःखों का अनुभव करते हैं।	६२४–६२५
११ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र।	६२५
१२ क्रूरकर्म करनेवाला जीव बहुतकाल तक नरकमें रहता है और क्रूरकर्म नहीं करनेवाला जीव कभी भी नरकमें नहीं जाता है।	६२६
१३ सातवाँ सूत्रका अवतरण और सातवाँ सूत्र।	६२७
१४ चतुर्दशपूर्वधारी और केवलज्ञानीके कथनमें थोड़ासा भी अन्तर नहीं होता!	६२७–६२८
१५ अष्टम सूत्रका अवतरण और अष्टम सूत्र।	६२८
१६ इस मनुष्यलोकमें कितनेक श्रमण ब्राह्मण–'सभी प्राणी, सभी भूत, सभी जीव और सभी सत्त्व हनन करनेयोग्य हैं, हनन करने के लिये आज्ञा देनेयोग्य हैं, हनन करनेके लिये ग्रहण करने योग्य हैं और विषशस्त्रादिद्वारा मारने योग्य हैं; इसमें कोई दोष नहीं हैं' इस प्रकार कहते हैं। यह सब अनार्यवचन ही है।	६२८–६३१
१७ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र।	६३२
१८ सभी प्राणी, सभी भूत–आदि हनन करनेके योग्य हैं, इत्यादि जो कोई श्रमण–ब्राह्मण कहते हैं, उनका यह कथन अनार्यवचन है' इस प्रकार आर्योंका कथन है।	६३२–६३३
१९ दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र।	६३४
२० 'सभी प्राणी, सभी भूत आदि हनन करनेयोग्य नहीं हैं–इत्यादि कथन आर्योंका है'–इस प्रकार स्वसिद्धान्तप्रतिपादन।	६३५–६३६
२१ ग्यारहवें सूत्रका अवतरण और ग्यारहवां सूत्र।	६३६
२२ दुःख जैसे अपने लिये अप्रिय है उसी प्रकार वह सभी प्राणी, भूत–आदिके लिये भी अप्रिय है। अतः किसीको दुःख नहीं देना चाहिये। उद्देशसमाप्ति।	६३६–६३८

॥ इति द्वितीयोद्देशः ॥

*

विषय | पृष्ठाङ्क

॥ अथ तृतीयोद्देशः ॥

१ द्वितीय उद्देशके साथ तृतीय उद्देशका सम्बन्धप्रतिपादन, प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र। ६३९

२ धर्मसे बहिर्भूत लोगोंकी उपेक्षा करो, ऐसे लोगोंकी उपेक्षा करनेवाला मनुष्य ही विद्वान् है। ६३९–६४०

३ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र। ६४१

४ विद्वान् मनुष्य मनोवाक्कायके सावद्यव्यापाररूप दण्डके त्यागी होते हैं, अष्टविध कर्मोंके त्यागी होते हैं, उनके शरीर शोभा संस्कार आदिसे रहित होते हैं, अतएव वे सरल होते हैं एवं आरम्भजनित दुःखोंके अभिज्ञ होते हैं। विद्वानके इस स्वरूपको सम्यक्त्वदर्शी–केवलीने कहा है। ६४१–६४६

५ तृतीय सूत्र का अवतरण और तृतीय सूत्र। ६४६–६४७

६ सम्यक्त्वदर्शी मुनि–सर्वज्ञ, यथावस्थित अर्थको प्रतिबोधित करनेवाले तथा अष्टविध कर्मोंको दूर करनेमें कुशल होते हुए सभी प्रकारसे कर्मोंको जानकर ज्ञ और प्रत्याख्यानरूप दो प्रकारकी परिज्ञाको कहते हैं। ६४७–६४८

७ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र। ६४८

८ इस मनुष्यलोकमें आर्हत आगमका श्रवण, मनन और समाराधन करनेवाला, हेयोपादेयके विवेकमें निपुण, रागद्वेषरहित मनुष्य आत्माको स्वजन–धन–शरीरादिसे भिन्न समझकर शरीरमें आस्था न रखे। ६४९–६५४

९ पञ्चम सूत्र। ६५४

१० तपस्या–आदिके द्वारा शरीरका शोषण करे, शरीरको जीर्ण बना दे। ६५४

११ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र। ६५५

१२ जैसे अग्नि जीर्णकाष्ठोंको भस्म कर डालती है उसी प्रकार आत्मा के शुभ परिणाम सम्यग्दर्शनादिमें सावधान और शब्दादि

विषय		पृष्ठाङ्क
	विषयोंमें रागरहित मनुष्य ज्ञानावरणीयादि अष्टविध कर्मोंको भस्म कर डालता है।	६५५
१३	सातवें सूत्रका अवतरण और सातवां सूत्र।	६५६
१४	मुनि इस मनुष्यलोकको परिमित आयुवाला जानकर प्रशम गुणकी वृद्धि करके क्रोधादि कषायोंका त्याग करे।	६५६
१५	आठवां सूत्र।	६५७
१६	हे मुनि! क्रोधादिवश त्रिकरण–त्रियोगसे प्राणातिपात करनेसे जो प्राणियोंको दुःख होता है, या क्रोधादिसे प्रज्वलित मनवाले जीवको जो मानसिक दुःख होता है उसको समझो, और क्रोधजनित कर्मविपाकसे भविष्यत्कालमें जो दुःख होता है उसे भी समझो। ऐसे क्रोधी व्यक्ति भविष्यत्कालमें नरकनिगोदादि-भवसंबन्धी दुःखोंको भोगते हैं। दुःखागमके भयसे कांपते हुए जीवोंको तुम दयादृष्टिसे देखो।	६५७–६६१
१७	नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र।	६६१
१८	जो भगवान तीर्थङ्करके उपदेशमें श्रद्धायुक्त हैं, और उनके उपदेश को धारण करनेके कारण क्रोधादिकषायरूप अग्निके प्रशान्त हो जानेसे शीतीभूत हो गये हैं, अतएव जो पापकर्मोंके विषयमें निदानरहित हैं, वे ही मोक्षसुखके भागी कहे गये हैं।	६६१–६६४
१९	दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र।	६६४
२०	हे शिष्य! जिसलिये क्रोधादिकषायोंसे युक्त जीव अनन्त दुःख पाता है, इसलिये तुम आर्हतागम परिशीलन–जनित सम्यग्ज्ञानसे युक्त अतिविद्वान् होकर क्रोधादिकषायजनित सन्तापसे अपनेको बचाओ। उद्देशसमाप्ति।	६६४–६६५

॥ इति तृतीयोद्देशः ॥

*

॥ अथ चतुर्थोदेशः ॥

विषय	पृष्ठाङ्क
१ तृतीय उद्देशके साथ चतुर्थ उद्देशका सम्बन्धप्रतिपादन, प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र ।	६६६
२ मातापिता आदिके सम्बन्धको या असंयमको छोड़कर और संयमको प्राप्तकर, शरीरको प्रथम प्रव्रज्याकालमें साधारण तपसे, बादमें प्रकृष्ट तपसे, और अन्तमें पण्डित मरणद्वारा शरीरत्यागकी इच्छासे युक्त हो मासार्द्धमास क्षपणादि तपोंसे पीडित–कृश करे ।	६६६–६६७
३ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र ।	६६८
४ उपशमका आश्रयण करके कर्मविदारणमें समर्थ, संयमाराधनमें खेदरहित, जीवनपर्यन्त संयमाराधनमें तत्पर और समिति एवं सम्यग्ज्ञानादि गुणोंसे युक्त हो कर मुनि सर्वदा संयमाराधनमें प्रयत्नयुक्त रहे ।	६६८
५ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र ।	६६८–६६९
६ मोक्षगामी वीरोंका यह संयमरूप मार्ग कठिनतापूर्वक सेवनीय है ।	६६९
७ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र ।	६६९
८ अन्तप्रान्त आहारादिसे और अनशनादिसे अपने शरीरके मांस शोणितको सुखाओ । इस स्वशरीरशोषक मोक्षार्थी पुरुषको तीर्थङ्करोंने कर्मविदारण करनेमें समर्थ और श्रद्धेयवचन कहा है। और जो ब्रह्मचर्य महाव्रतमें तत्पर होकर कर्मोपचयका क्षपण करता है वह भी श्रद्धेयवचन है ।	६६९–६७०
९ पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र ।	६७०
१० साधु विषयोंसे अपनी इन्द्रियोंको हटा कर भी ब्रह्मचर्यमें स्थित हो कर भी और श्रद्धेयवचन हो कर भी यदि शब्दादि विषयभोगोंमें आसक्त होता है तो वह बाल अपने कर्मबन्धको काटनेमें समर्थ नहीं होता ! वह बाल मातापिता आदिके सम्बन्धको या असंयम सम्बन्धको नहीं छोड़ पाता ! आत्महितको	

विषय	पृष्ठाङ्क
नहीं जाननेवाला उस बालको भगवान् तीर्थङ्करके उपदेशरूप प्रवचनका अथवा सम्यक्त्वका लाभ नहीं होता!	६७०–६७५
११ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र।	६७५
१२ जिसको पूर्वकालमें सम्यक्त्व नहीं मिला है और भविष्यत्कालमें भी जिसे सम्यक्त्व नहीं मिलनेवाला है उसे वर्त्तमानमें सम्यक्त्व कहांसे मिले ?	६७५–६७७
१३ सातवें सूत्रका अवतरण और सातवां सूत्र।	६७७
१४ जो भोगविलाससे रहित होता है वही जीवाजीवादि पदार्थोंका सम्यग्ज्ञाता तत्त्वज्ञ आरम्भसे उपरत होता है। यह आरम्भसे उपरमण होना ही सम्यक्त्व है। इस आरम्भोपरमणसे जीव घोर दुःखजनक कर्मबन्धको, वधको और दुस्सह शारीरिक परितापको नहीं पाता है। अथवा जिस आरम्भसे जीव घोर दुःखजनक कर्मबन्ध और वधको तथा दुस्सह शारीरिक मानसिक परिताप को पाता है।	६७७–६८०
१५ आठवें सूत्रका अवतरण आठवां सूत्र।	६८०
१६ हिरण्यरजत मातापिता आदिका सम्बन्धरूप अथवा प्राणातिपात-रूप बाह्य आस्रवको और विषयाभिलाषरूप आन्तर स्रोतको रोक कर इस लोकमें मनुष्योंके बीच मोक्षाभिलाषी हो सावद्यव्या-पारका परित्याग करे। अथवा इस लोकमें मनुष्योंके बीच बाह्य स्रोतको छिन्न कर निष्कर्मदर्शी हो जावे।	६८०–६८२
१७ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र।	६८२
१८ ज्ञानावरणीयादिक कर्म अवश्यमेव स्व–स्वफलजनक होते हैं–ऐसा जानकर आर्हतागमजनित सम्यग्ज्ञानवान् मुनि कर्मबन्धके कारण सावद्य व्यापारको छोड़ता है।	६८२–६८३
१९ दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र।	६८३
२० हे शिष्य ! जो कोई कर्मविदारण करनेमें उत्साहयुक्त, समिति-युक्त, स्वहितमें उद्योगयुक्त अथवा–सम्यग्ज्ञानादियुक्त, सर्वदा	

विषय		पृष्ठाङ्क
	संयमाराधनमें सावधान, हेयोपादेयके ऊपर सर्वदा दृष्टि रखने-वाले, अव्याबाध आनन्दस्वरूप मोक्षके अभिलाषी और कषायों से निवृत्त होते हुए यथावस्थित लोककी–कर्मलोक अथवा विष-यलोककी उपेक्षा करते हुए थे, वे चाहे पूर्व–आदि कसी भी दिशामें रहे हुए हों; सत्य मार्गमें ही स्थित थे।	६८४–६८७
२१	ग्यारहवें सूत्रका अवतरण और ग्यारहवां सूत्र।	६८७
२२	वीर–समित–आदि विशेषणोंसे युक्त उन महापुरुषोंके ज्ञानका वर्णन हम आगे करेंगे। क्या उनको उपाधि है? पश्यकको उपाधि नहीं होती है। उद्देशसमाप्ति।	६८७–६८८
२३	चतुर्थ उद्देशकी टीकाका उपसंहार।	६८९–६९०

॥ इति चतुर्थोद्देशः ॥